Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 10 | ISSUE : 1 | JANUARY 2024

निर्गुण भक्ति परंपरा : कबीर एक संपूर्ण दर्शन

भैंरु लाल सेन [1]

[1] **सहायक आचार्य हिंदी विभाग, आचार्य श्री महाप्रज्ञ इंस्टीट्यूट ऑफ एक्सीलेंस आसींद , राजस्थान**

ABSTRACT:

मध्य युग राजनीतिक उथल पुथल, सामाजिक परिवर्तन और धार्मिक मंथन का दौर कहा गया है। इसी दौर में भारतीय जनसमान्य की आस्था व भक्ति के भीतर एक व्यापक आन्दोलन उठ खड़ा हुआ जिसे भक्ति आन्दोलन' के नाम से जाना जाता है। इस आन्दोलन ने संतो के एक नये वर्ग को जन्म दिया जिसके, अगुआ कबीर कहे जाते हैं।

कबीर एकेश्वरवादी होने के कारण ऐसे संत थे जिनकी शिष्य परंपरा में हिन्दू व मुसलमान सभी दीक्षित होते थे। कबीर आज की दार्शनिक शब्दावली 'में साम्यवादी दिखाई देते हैं, दूसरे शब्दों में वह मार्क्स व ऐन्जल के अग्रगामी थे। कबीर ने स्त्रियों के अधिकार पर बल दिया।

KEYWORDS:

अबुल फजल, रामानन्द, बीजक, मुवाहिद, निर्गुण भक्ति, आर्थिक दर्शन।

PAPER ACCEPTED DATE:	PAPER PUBLISHED DATE:
23rd January 2024	24th January 2024

विषय प्रवेश

कबीर का जीवन परिचय प्रायः उनके द्वारा लिखे गये काव्य तथा बाद में लिखी गई जीवनियों के आधार पर मिलता है। परन्तु इतिहास ग्रन्थों में कबीर का सर्वप्रथम बेहद संक्षिप्त परिचय अबुल फजल कृत "आइन-ए-अकबरी' में मिलता है। दबिस्ताने में, मजाहिब में कबीर का परिचय दिया गया है- 'जन्म से जुलाहे कबीर, एक बैरागी थे। 'कबीर' अरबी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है 'महान'।

विधवा ब्राह्मणी द्वारा त्याज्य शिशु को नीरु और नीमा मुस्लिम दम्पत्ति ने ग्रहण कर पालन पोषण किया तथा 'कबीर' यह सार्थक नाम दिया। कबीर ने पालक पिता का पेशा सीखा किन्तु काशी में रहते हुए उनका संर्पक हिन्दू सन्तों व-सूफियों दोनों से हुआ । कबीर नाथपंथियों से भी काफी प्रभावित थे। गुरु रामानन्द की कृपा से उन्होंने अपने संसार को सृजनात्मक क्रिया की ओर उन्मुख किया।

चूंकि कबीर अनपढ़ थे एवं उन्होंने मौखिक सन्देश दिये, जिन्हें बहुत बाद में लिखित रुप में प्रस्तुत किया गया। कबीर की 'बानी' (उपदेश / शिक्षाएँ) तीन विशिष्ट किंतु परस्पर व्याप्त परिपाटियों में संकलित हैं। कबीर पंथियों द्वारा रचित कबीर के पदों में सर्वाधिक श्रद्धेय 'कबीर बीजक' है। जो कबीर पंथियों द्वारा वाराणसी तथा उत्तर प्रदेश के अन्य स्थानों पर संरक्षित है। कबीर ग्रन्थावली का संबंध राजस्थान के दादू पंथियों से है। पंजाबी परंपरा के बजाय दादू पंथियों द्वारा पंचवाणी में रचित कबीर के पद अपेक्षाकृत कम प्रामाणिक हैं।

बीजक, कबीर पंथ का सबसे प्रमुख ग्रन्थ है जिसमें कबीर की मुख्य शिक्षाऐं दोहों के रूप में संकलित हैं, इसका संकलन कबीर के शिष्य भागदास ने किया था। इसमें दस इन्द्रियों एवं ग्यारहवें मन को मिलाकर कुल ग्यारह प्रकरण मिले हुए हैं। जो इस प्रकार हैं-

1. रमैनी,
2. शब्द,
3. ज्ञानचौंतीसा,
4. विप्रमतीसी,
5. कहरा,
6. बसन्त,
7. चाचर,
8. वेलि,
9. बिरहुली,
10. हिण्डोला,
11. साखी।

रमैनी के प्रथम प्रकरण में संसार की उत्पत्ति के बारे में कहा गया है कि, -

अन्तर जोति शब्द एक नारी। हरि ब्रह्म ताके, त्रिपुरारी ॥1॥
ते तिरिये भग लिंग अनंता। तेउ न जाने आदिउ अन्ता ॥2॥
बाखरि एक बिधातै कीन्हा। चौदह ठहर पाट सौ लीन्हा ॥3॥
हरिहर ब्रह्म महन्तो नाऊँ। 'तिन्हें पुनि तीन बसावल गाउँ, ॥4॥

अन्तर ज्योति अर्थात अन्तर आत्मा के ज्ञान, शब्द अर्थात् जिसमें मनुष्य अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति करता है वह है उसके भाव जो कवित्त बन झलकते हैं। तथा नारी अर्थात कल्पना : जिसमें शक्ति तथा मन:शक्ति, इनके द्वारा ही ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर की उत्पत्ति हुई है। मनुष्य की इसी शक्ति से संसार की सृष्टि, अवस्था तथा प्रलय के निमित्त इन तीनों देवों की कल्पना हुई।

इन्हीं तीन देवों से भग-लिंग यानि स्त्री पुरुष की उत्पत्ति हुई जो कि अनगिनत थे। अर्थात् वे इस संसार के आवागमन के चक्कर को नहीं समझ सके थे। फिर परमपिता परमात्मा अर्थात ब्रह्मा जी ने वेद रूप में वाणी को प्रकट किया जो कि, क्रमशः ऋगवेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद बने। इस तरह, चौदहों भुवनों में धर्म, कर्म इत्यादि का पाठ एवं प्रचार होना आरंभ हो गया। इन तीनों देवताओं अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु एवं शिवजी को महान देवता माना गया है। एवं इन तीनों देवों ने क्रमशः विष्णुपुर, ब्रह्मपुर तथा शिवपुर नाम के तीन लोकों का निर्माण किया। अर्थात् इन्हीं तीनों देवों के द्वारा भक्ति, ज्ञान एवं कर्मकाण्ड की स्थापना हुई। इन तीनों लोकों को क्रमश: सुरलोक अर्थात् स्वर्गलोक, नरलोक अर्थात् मृत्युलोक तथा नागलोक अर्थात् पाताल लोक के नाम से सम्बोधित किया गया है।

निर्गुण भक्ति के बारे में कबीर साहब ने फरमाया है-

"अपनपो आपनही बिसरो।

जो केहरि बपु निरखि कूपजल तामे जाय परो।

ऐसेहि गज लखि फटिक शिलाको प्रतिमा देखि अरो॥

मरकट मूठी स्वाद न छोडे घरघर नटत फिरों।

कहे कबीर नलिनी के, सोना कोनि तोहि पकरों"।

यह जीव इस संसार स्वरूपी पागलखाने में आकर अपने प्यारे रामको अपने आत्मस्वरूप सच्चिदानंद को अपने आप ही भूल गया। इसके बाद यह अपने आप अपने स्वरूप के भ्रम में फंस कर ऐसे मर रहा है जैसे कांच के मंदिर में कूकर अपनी परछाई देखकर दुख पाता फिरता है। और झुक-झुक कर अन्त में मर ही जाता है। शेर अपनी परछाई पानी में देखकर उसे शेर समझकर पानी में गिर पड़ता है। बन्दर बाजीगर की दी हुई मुटठी का स्वाद नहीं भूलता। घर-घर जाकर नाचता फिरता है। कबीर कहते हैं कि "ए ललनी के तोते! तुझे किसने पकड रखा है"। जीव अपने भ्रम से आप ही बद्ध हो रहा है, यदि वहम छोड़ दे तो उद्धार पा जाये। पर अन्धेर नगरी में अपने को भूलकर बैठा है। इस कारण दुख: पा रहा है यदि भगवान कृपा करे तो उद्धार हो जायेगा।

बाह्य आडंबर के बारे में कबीर ने कहा है –

"पाहन पूजें हरि मिलें, तो मैं पूजूं पहार।

ताते तो चाकी भली, पीस खाये संसार"॥

अर्थात् मूर्ति पूजा, व्रत तीर्थाटन, पवित्र नदियों में स्नान हो, वे कार्य जो सार्थक परिणाम देने में असमर्थ हैं उन्हें त्याग देना ही हितकारी है। वे कार्य ही प्रशंसनीय एवं स्वीकृत हैं जो किसी उच्च लक्ष्य से प्रेरित हों।

वेस्टकाट ने कबीर को 'भारतीय लूथर की संज्ञा दी है। कबीर मूलतः कोई समाज सुधारक नहीं थे किन्तु उनका विश्वास था कि, मानव अपने आचरण द्वारा समाज को बदल सकता है।

आर्थिक दृष्टि से कबीर आज की दार्शनिक शब्दावली में साम्यवादी दिखाई देते हैं। जिस तथ्य को मार्क्स व ऐन्जल ने आधुनिक युग में पहचाना कबीर ने बहुत पहले ही स्पष्ट घोषणा की थी कि, समाज व राष्ट्र में अधिकतर विवाद अर्थव्यवस्था की असमानता से उपजते हैं। धन को उन्होंने जन समाज का अनिवार्य तत्व माना किन्तु वे उतने ही धन को सर्वोपरि समझते थे जो दैनिक आवश्यकताओं की भली प्रकार पूर्ति कर सके।

"साँई इतना दीजिये,। जामे कुटुम समाय।

मैं भी भूखा ना रहूं। साधु न भूखा जाय" ॥12

कबीर उन लोगों को चेतावनी भी देते हैं जो जरूरत से अधिक धन का संचय करते हैं वे कहते हैं-

"काहे कूं मीत बनाउं टाटी, का जानूं कहाँ परिहै माटी।

काहे के मंदिर महल चिनाऊँ, मूवाँ पीछे घड़ी एक रहन न पाउँ"॥ 12

समाज में पहले से ही भुखमरी थी ही कि, अमीरों द्वारा धन संचय ने आर्थिक स्थिति को और ही दयनीय बना दिया। भूख से मुक्ति का उपाय नहीं दिख रहा था। लोगों को भगवान का ही भरोसा रह गया था। कबीर लिखते हैं, -

"कुबीर भूखा क्या करें, कहा सुनावे लोग।

भांडा घड़ि जिनि मुख दिया, सोई पूरण जोग" ॥ 13

तत्कालीन समय में गरीबी इतनी ज्यादा थी कि, गरीब लोगों को अच्छा भोजन भी नहीं मिल पाता था। अच्छा खाने का मन करे तो भगवान की मनौती के बहाने हलुआ, पूरी या अच्छे भोजन की व्यवस्था करते थे। कबीर इस संबंध में कहते हैं –

"कबीर खूब खांड है खीचड़ी, मांहि पड़ै टूक लूंण।

हेडा रोटी खाइ करि गला कूटावे कौणं" ॥9

तत्कालीन समाज में उच्च वर्ग में कामिनी और कंचन का बड़ा लगाव था, लोगों से अत्यधिक धन संग्रह की प्रवृत्ति थी, आज के समय में इस आदत में बदलाव नहीं हुआ है। इस संबंध में कबीर कहते हैं-

"न संचय राजा मूये, अरु ले कंचन भारी" ॥10

कबीर अपरिग्रह की बात करते हैं। उनका मानना है कि, मनुष्य को उतना ही एकत्रित करना चाहिए जिसमें उसका कार्य संपन्न हो जाये। कबीर कहते हैं-

"काहे के छाऊँ उंच उन्चेरा, साढ़े तीनि हाथ घर मेरा॥

कहै कबीर नर गरीब न कीजे, जेता तन तेती भुंई लीजै" ॥11

कबीर की ईश्वरोपासना की मांग वास्तव में आर्थिक और समानता की मांग थी। कबीर की मांग उन बनावटी एवं ऊपर से लादी हुई मर्यादाओं और परम्पराओं को तोड़ने की मांग थी जो विशाल जन समूह को उसके अधिकारों से वंचित किये हुए थी। वे जन-समाज में होने वाले हर प्रकार के शोषण को मिटा देना चाहते थे। इसीलिए उन्होंने कहा था-

"कबीरा, कुआं एक है, पानी भरै अनेक।

बर्तन में ही भेद है, पानी सब में एक"॥

मध्यकालीन भारत के सबसे बड़े इतिहासकार और बुद्धिजीवी अबुल फजल ने कबीर को मुवाहिद के रूप में उल्लेखित किया है, उनका कहना कि, उन्होंने जीवन के छिपे हुए अर्थ को उजागर किया था। कबीर को मध्यकालीन भारत में उदार मुस्लिम हलकों में एक मुवाहिद के रूप में मान्यता दी गई है। कबीर भी मुवाहिद की स्थिति की सीमा से परे थे। इस्लाम और हिंदू धर्म की यह विशिष्टता अर्जित करने के लिए कबीर ने दो प्रचलित रूढ़िवादी मान्यताओं पर सवाल उठाये- प्रतिद्वंदी देवताओं की अवधारणा और उनकी पूजा के लिए धार्मिक अनुष्ठानों की आवश्यकता। अल्लाह और ईश्वर के स्थान पर उन्होंने एक ही सार्वभौमिक ईश्वर की कल्पना की। उन्होंने साम्प्रदायिक धर्म के स्थान पर सार्वभौम धार्मिकता की संकल्पना की।

"ए भाई रे दो जगदीस कहाँ से आया। काहू कौने बौराया"।

उन्होने जोर देकर कहा-

"अल्ला, राम, करीम, केसव

हरि हजरत नाम धराया"॥

उन्होंने मंदिरों या मस्जिदों में जाने के रीति-रिवाजों का भी उपहास किया, जिन रीति-रिवाजों का उल्लेख अबुल फजल करता है और स्वयं इन्हें छोड़ने का समर्थन किया करता है। सुलह-ए-कुल की अवधारणा, जिसके लिए अबुल फजल और अकबर दोनों ने प्रशंसा अर्जित की है, उसका आधार कबीर को लिया गया है। बुल्लेशाह कबीर की भाषा बोलते हैं जब उनका मानना है कि, मोक्ष सभी अनुष्ठानों को त्यागने और किसी धार्मिक अहंकार को त्यागने में है।

निष्कर्ष

कबीर का जीवन दर्शन सच्चे अर्थो में समाज का दर्शन कहा जा सकता है। दर्शन वह है जो जीवन के प्रति अर्थवत्ता एवं मानवीय चिन्ता को अभिव्यक्त करता है। कबीर ने सन्यास व आनन्दोपभोग के बीच एक मध्यम मार्ग की वकालात की जिसमें आध्यात्मिक जीवन को गृहस्थ के कर्तव्यों के साथ समन्वित किया है। कबीर की शिक्षा का अधिक महत्वपूर्ण पहलू मानवी समानता पर बल देना भी था। उन्होंने जाति, व्यवसाय, नस्ल अथवा संपत्ति पर आधारित असमानता की निंदा की और धनवान तथा शक्तिशाली व्यक्तियों की जीवन शैली के लिए उनकी आलोचना की। कबीर ने गरीबों और दलितों की भावनाओं को स्वर दिया, वे उनके जीवन में परिवर्तन चाहते थे।

REFERENCES

1. श्रीवास्तव आशीर्वाद लाल - मध्यकालीन भारतीय संस्कृति
2. कुंवरपाल सिंह - भक्ति आन्दोलन: इतिहास और संस्कृति
3. प्रजापत पप्पूसिंह - तराइन से पानीपत
4. स्वामी युगलानन्द - कबीर सागर (सम्पूर्ण 11 भाग)
5. शर्मा राम किशोर - कबीर ग्रंथावली (2018)
6. दास श्याम सुंदर- कबीर ग्रंथावली
7. मुखिया हरकास - द वायर (15 दिस०2018)